श्री आनंद कल्याण

वि.सं. २०७४ - कार्तिक शुक्ला - १५ • दि. ४, नवम्बर, २०१७ • अंक-७

7

शेठ आणंदजी कल्याणजी

अहमदाबाद

श्री शत्रुंजय तीर्थाधिपति

श्री आदिनाथ दादा की ५००वीं सालगिरह

के उपलक्ष में

५००वीं सालगिरह का प्रसंग

संवत २०८७ वैशाख वद-६. सोमवार दिनांक १२-०५-२०३१

शेठ आणंदजी कल्याणजी पेढी

द्वारा प्रस्तुत लाभ लेने का सुवर्ण अवसर.....

"सुवर्ण महोत्सव प्रसंग आयोजित सर्व साधारण फंड"

१५ साल बाद आनेवाले

सुवर्ण महोत्सव में हमारा लाभ क्यों न हो ?

बस ! आज से सिर्फ १ रुपया प्रति दिन द

१ साल के रु. ३६०, १५ साल के रु.५४००.

शेठ आणंदजी कल्याणजी के नाम का एकाउन्ट पेयी चैक / नकद भारत की एच.डी.एफ.सी. बैंक की किसी भी शाखा में सेविंग्स एकाउन्ट नं. 50100185224400 में जमा किया जा सकेगा। चैक जमा कराने के बाद पे-इन-स्लीप ट्रस्ट के अहमदाबाद के पते पर अपना नाम, पता, मोबाईल नंबर, ई-मेईल सहित फोर्म भरके भेज कर दान की रसीद अवश्य प्राप्त करे।

इस हेतु फोर्म शेठ आणंदजी कल्याणजी ट्रस्ट संचालित सभी तीर्थो में उपलब्ध है। इस के अलावा www.anandjikalyanjipedhi.org वेबसाईट पर से भी फोर्म डाउनलोड कर सकेंगे।

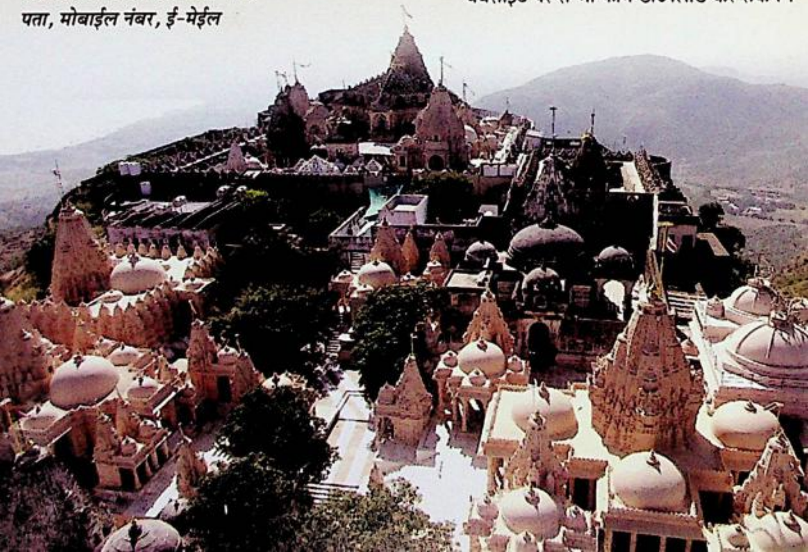

"श्री आनंद कल्याण" (त्रिमासिक पत्र)

(धार्मिक धर्मादा ट्रस्ट रजि नं. ए-१२९९/अहमदाबाद)

वर्ष : २ अंक : ७ कींमत : ₹ २० वार्षिक शुल्क : ₹ १००

स्वयं क्षेत्र ही जहां तीर्थरुप माना जाता हो वैसा एकमेव क्षेत्र आदि कोई है तो वह है सिद्धक्षेत्र !

यहां की भूमि में भी भगवद् भाव बहता है, साधक की साधना यहां के वातावरण में छायी हुई हैं ! इसकी मर्यादा जिनालय की भांति रखी जाती है । यहां खानपान का निषेध है, यह इस तीर्थभूमि के क्षेत्रमहिमा का सूचक है। ग्रंथों में बडी ही सटीक बात कही है :

छिद्यन्ते नास्य पाषाणाः
खन्यते न महीतलम् ॥
शकृन्मूत्रादिनो कार्यो
सुधीपात्र मुमुक्षुणाः ॥

बुद्धिमान मोक्षार्थी आत्मा को इस पृथ्वी को परम तत्व मानना उसे तोडना नहीं चाहिए। खोदना मत ! इस पृथ्वी पर टट्टी-पेशाब वगैरह भी नहीं करने चाहिए ।

('शत्रुंजय सत्कार' पुस्तक से)

: प्रकाशक :

शेठ आणंदजी कल्याणजी

श्रेष्ठी लालभाई दलपतभाई भवन,

२५, वसंतकुंज, नवा शारदा मंदिर रोड, पालडी, अहमदाबाद-३८० ००७.

श्री आनंद कल्याण (त्रैमासिक पत्र)

वर्ष : २ अंक : ७

प्रकाशन

वि.सं. २०७४, कार्तिक शुक्ला -१५ • ता. : ४-११-२०१७, शनिवार

प्रकाशक

महेन्द्र शाह (जनरल मेनेजर)

शेठ आणंदजी कल्याणजी ट्रस्ट

श्रेष्ठी लालभाई दलपतभाई भवन,

२५, वसंतकुंज, नवा शारदा मंदिर रोड़, पालडी, अहमदाबाद-३८०००७

दूरभाष : 26644502 – 26645430

E-mail : shree_sangh@yahoo.com / info@anandjikalyanjipedhi.com

मुद्रक :

नवनीत प्रिन्टर्स (निकुंज शाह) मोबाईल : 9825261177

प्रभु की स्तवना करनेवाले अनेकों श्लोक मिलेंगे पर किसी पर्वत स्तवना कभी देखी-सुनी है ? शास्त्रों मे महत्त्वपूर्ण श्लोक लिखा गया है

असु वा प्रतिमा मास्तु केवलंस्त्वं नगाधिपः ।
भिनत्स्येनांसि लोकानि दर्शनात्स्पर्शनादपि ॥

ओ गिरिराज ! तेरे पर किसी की प्रतिमा हो या ना हो फिरभी मात्र तेरे दर्शन से, और तेरे स्पर्शन से ही तू लोगों के पाप काट देता है ।

ये पंक्तिया गिरिराज की तीर्थरुपता को प्रस्थापित करती है। यह समग्र गिरिराज एक महातीर्थ है । इसीलिये एक जिनालय सा इसका औचित्य रखना है ।

("शत्रुंजय सत्कार" पुस्तक से)

चौथे आरे में
श्री शत्रुंजय महातीर्थ के हुए उद्धार

१. श्री ऋषभदेव प्रभु के समय में भरत चक्रवर्ती के द्वारा।
२. भरत चक्रवर्ती के वंश में हुए राजा दंडवीर्य के द्वारा।
३. दूसरे देवलोक के इन्द्र इशान के द्वारा।
४. चौथे देवोक के इन्द्र महेन्द्र के द्वारा।
५. पाँचवे देवलोक के इन्द्र ब्रह्म के द्वारा।
६. भवनपति के इन्द्र चमर के द्वारा।
७. श्री अजितनाथ भगवान के समय में सगर चक्रवर्ती के द्वारा।
८. व्यंतर इन्द्र के द्वारा।
९. श्री चंद्रप्रभस्वामी भगवान के समय में चंद्रयशा राजा के द्वारा।
१०. श्री शांतिनाथ भगवान के समय में चक्रायुध राजा के द्वारा।
११. श्री मुनिसुव्रत स्वामी भगवान के समय में श्री रामचन्द्रजी के द्वारा।
१२. श्री नेमिनाथ भगवान के समय में श्री पांडवों के द्वारा।

प्रथम उद्धारक-भरत महाराजा के द्वारा श्री शत्रुंजय तीर्थ पर त्रैलोक्यविभ्रम जिनप्रासाद का निर्माण

एक बार सौधर्मेन्द्र ने मधुरवाणी से भरत महाराजा से कहा, "काल के प्रभाव से मनुष्य उत्तरोत्तर हीनगुणवाले होते जाते हैं, अतः इस गिरिराज पर प्रभुजी की प्रतिमा के बिना कोई इसकी श्रद्धा नहीं करेगा। प्रभु के चरणों से पवित्र यह गिरिराज स्वयं तीर्थरूप है, तथापि लोगों की भावना में विशेषशुद्धि हेतु यहाँ जिनेश्वर परमात्मा का एक भव्य प्रासाद होना चाहिए। जो तीर्थंकर जिस-जिस काल में विद्यमान होते हैं, उस काल में उन-उन तीर्थंकरों की प्रतिमाएँ प्रतिष्ठित होती हैं। अभी श्री ऋषभदेव स्वामी जयवंत हैं। अतः उनकी प्रतिमासहित इस तीर्थाधिराज पर विनीता नगरी के चैत्य के समान एक जिनमंदिर आप करवाओ।"

इन्द्र के ऐसे वचन सुनकर, भरत राजा ने वर्द्धकीरत्न को आज्ञा दी। दिव्य शक्तिमान वद्र्धकिरत्न ने अल्पकाल में मणिरत्नों से सुशोभित "**त्रैलोक्यविभ्रम**" नामक एक प्रासाद बनाया। ८४ (चौरासी) मंडपयुक्त वह

प्रासाद एक कोस ऊँचा, दो कोस लम्बा तथा एक हजार धनुष चौड़ा था। उनके आसपास लाखों गोखलें, रत्नमयी वेदिकाएँ, झरोखे एवं अनेक अटारियाँ (मंजिल) सुशोभित थीं। उनके मध्यभाग में श्री ऋषभदेव प्रभु की चतुर्मुखवाली रत्नमय तेजस्वी प्रतिमा थी एवं प्रतिमा के दोनों तरफ गणधर भगवान श्रीपुंडरीकस्वामी की अद्‌भुत प्रतिमा थी तथा कायोत्सर्ग मुद्रा में प्रभु श्रीऋषभदेवस्वामी की प्रतिमा एवं दोनों तरफ खड्‌ग हाथ में लिए हुए नमि-विनमि की मूर्ति विराजमान थी।

उस मंदिर में एक तरफ तीन गढ़ के बीच केवलज्ञनी चतुर्मुख प्रभु मानों धर्मतत्त्व की देशना देते हों वैसी मूर्ति विराजमान की। उनके सम्मुख श्रीयुगादिप्रभु पर दृष्टि रखकर, अंजली करके खड़ी स्वयं की मूर्ति विराजमान की। इसके सिवाय श्रीनाभिराजा, मरुदेवी माता एवं अन्य पूर्वजों की भी रत्नमय मूर्तियाँ भरतराजा ने बनवाकर अन्य प्रासादों में प्रतिष्ठित करवायी। तथा उस प्रासाद में सुनंदा एवं सुमंगला माता की मणि-रत्नमय मूर्तियाँ व ब्राह्मी-सुंदरी की मूर्तियाँ भी बिराजमान कीं। तत्पश्चात् वहाँ अन्य नूतनमंदिर बनवाकर उसमें भावि अजितनाथ स्वामी आदि तेबीस तीर्थंकरों की प्रवाली प्रतिमाएं स्वस्ववर्ण एवं देहमान स्थापित कीं। उनके शासन देवदेवी की स्थापना भी की। तथा भरतराजा ने अपने अन्य बंधुओं की भी मणिरत्नमय मूर्तियाँ बनवाकर नूतन प्रासाद में विराजमान कीं।

गजवाहनवाला, दाँ हाथ में वरदान एवं अक्षमाला, बाँये हाथ में बीजोरा एवं पाशधारक, तप्त सुवर्णसमान वर्णवाला गोमुख यक्ष उस शत्रुंजय तीर्थ का रक्षक हुआ। तथा सुवर्ण वर्णवान, गरुड़ आसनवाली, चार दाँये हाथो में वरदान, अक्षमाला, चक्र एवं पाश तथा चार बाँये हाथों में धनुष, वज्र, चक्र एवं अंकुशधारिका अप्रतिचक्रा चक्रेश्वरी नामकी शासनदेवी उस तीर्थ की रक्षिका बनी.

द्वितीय उद्धारक : दंडवीर्य राजा

राजा दंडवीर्य की धर्मदृढता से प्रभावित होकर देवलोक के इन्द्र ने उनसे एक बार कहा : 'आप अपने गुणों में पूर्वजों से भी अधिक हो। पूर्व में स्वीकार किये कामों को करने वाले हो। आप जैसे कुलपुत्र से प्रभु का वंश

अद्यावधि प्रदीप्त है। इस कारण अब आप शत्रुंजय की यात्रा व तीर्थोद्धार करें। मैं देवताओं के साथ वहाँ आकर आपकी सहायता करूंगा। अतः अब तीर्थयात्रा के लिए शीघ्रता करो।'

इन्द्र के वचन सुनकर दंडवीर्य राजा ने कहा, "हे इन्द्र ! आपने मुझे बहुत श्रेष्ठ आदेश दिया है। मैं यात्रा पर जाता हूँ। अपना पुनः समागम पुंडरीक गिरि पर होगा।" तत्पश्चात, प्रसन्न हुए इन्द्र ने दंडवीर्य को बाण सहित धनुष, दिव्य रथ, और निर्मल दो कुंडल दिये। उसने वे स्वीकार किये। फिर इन्द्र स्वर्ग को लौट गए।

राजा दंडवीर्य ने यात्रार्थ घोषणा करवाई। घोषणा सुनकर बहुत से मनुष्य अपने वाहनों के साथ शीघ्र वहाँ पहुँचे। राजा ने शुभ समय में लोगों के साथ प्रयाण किया।

कुछ दिनों बाद राजा संघ सहित शत्रुंजय गिरि के पास आ गये। वहाँ आनन्दपुर में भरत चक्रवर्ती की तरह जिनपूजा, तीर्थपूजा और संघपूजा आदि सभी कार्य किये। फिर शत्रुंजय नदी, भरत कुंड एवं अन्य कुंडों से तीर्थजल लेकर शत्रुंजय गिरिराज पर चढे। मुख्य शिखर पर आकर उन्होंने प्रदक्षिणा की। मुख्य शिखर, मंदिर, रायणवृक्ष, समवसरण और प्रभु की पादुका की तीन-तीन बार पूजा की। उस समय अवधिज्ञान से दंडवीर्य को वहाँ आया जानकर सौधर्मेन्द्र देवताओं के साथ वहाँ पहुँचा और उनके कहे अनुसार विधिपूर्वक राजा ने देवपूजा, संघपूजा तथा महोत्सव आदि शुभ कार्य किये। फिर जगत्प्रभु के जीर्णशीर्ण मन्दिरों को इन्द्र की सम्मति से उद्धार किया तथा तीन अट्ठाई महोत्सव सहित तीर्थोत्सव किया, उसी तरह इन्द्र के साथ गिरनार पर भी उत्सव कर तीर्थ का उद्धार किया। तत्पश्चात् अर्बुदाचल, वैभारगिरि, अष्टापद और सम्मेत शिखरगिरि तीर्थ पर संघ सहित जाकर यात्रा और उद्धार किया। उसके बाद अपने राज्य में आकर दंडवीर्य राजा ने करोड़ों नये मन्दिर बनवाये।

एक बार राजा भरत की भाँति दर्पण में शरीर की शोभा निहारते मन में संसार की असारता जानकर शुभध्यान में चढ़ते हुए उन्होंने केवलज्ञान प्राप्त किया। फिर आधे पूर्व के समय तक व्रत पालन करते हुए अंत में मोक्ष गये।

इस तीर्थ का द्वितीय उद्धारक श्री भरतवंशी ऐसा पवित्र राजा दंडवीर्य हुआ। उस उद्धार के पुण्य से उसे मुक्तिसुख मिला।

तृतीय उद्धारक ईशानेन्द्र

तत्पश्चात् दीर्घकाल बाद तृतीय उद्धार हुआ। एक बार ईशानेन्द्र महाविदेह क्षेत्र में गए। वहाँ समवसरण में विराजमान सीमन्धर स्वामी को नमस्कार पूर्वक स्तुति कर उनके समक्ष बैठे। प्रभु ने देशना प्रारंभ की।

"जैसे सभी भव में मनुष्यभव, सभी ग्रहों में सूर्य, उसी प्रकार सभी द्वीपों में जंबूद्वीप उत्तम है। जंबूद्वीप के भरतक्षेत्र में सभी देशों में उत्तम सौराष्ट्र देश है। उस देश में पर्वतों में उत्तम पुंडरीकगिरि है। वहाँ सर्वदेवों में उत्तम श्री आदिनाथ भगवान हैं। इसिलए भरत क्षेत्र को धन्य है कि जहाँ शत्रुंजय तीर्थ है और वहाँ के निवासियों को भी धन्य है कि जो उस तीर्थ एवं जिनेश्वर की पूजा करते हैं।"

इस प्रकार परमात्मा की देशना श्रवण कर ईशानपति तीर्थयात्रा के लिए उत्कंठित होकर क्षणभर में शत्रुंजयगिरि आये। आदिनाथ प्रभु की स्तुति, नमन और जिनवाणी श्रवण करते इन्द्र ने देवों के साथ वहाँ अट्ठाई उत्सव किया। फिर वहाँ अरिहंत के मन्दिरों की जीर्णावस्था देख उन्होंने दिव्य शक्ति से उद्धार करवाया। दंडवीर्य राजा के उद्धार के पश्चात् सौ (१००) सागरोपम व्यतीत होने पर ईशानपति ने पुंडरीकगिरि पर यह तृतीय उद्धार करवाया।

श्री शत्रुंजय का चतुर्थ उद्धार

एकबार चौथे देवलोक माहेन्द्र नामक इन्द्र शत्रुंजय गिरि पर आये और प्रभु के जीर्ण शीर्ण मन्दिर को देखा एवं विचार किया, यह अवस्था किसी देवी की चेष्टा है। यह विचार कर दिव्यशक्ति से नवीन मन्दिर बनवाये। इसी प्रकार बाहुबली, कदंब, तालध्वज रैवतादि अन्य शिखरों पर स्थित मन्दिरों का भी उद्धार करवाया, ईशानेन्द्र द्वारा किये गये उद्धार पश्चात् करोड़ सागरोपम व्यतीत होने पर शत्रुञ्जय पर माहेन्द्र द्वारा चतुर्थ उद्धार हुआ।

पंचम उद्धार

एकबार ऐरावत क्षेत्र में देवता जिनजन्मोत्सव कर, नंदीश्वर द्वीप में अट्ठाई महोत्सव कर विमलाचल गिरिराज पर श्री आदिनाथ भगवान को वन्दन

करने आये। वहाँ रहे आदिनाथ की पूजा करते हुए प्रभु के मन्दिर की जीर्णावस्था देख सर्व देवताओं द्वारा प्रोत्साहित होकर पंचम देवलोक के ब्रह्मेन्द्र ने दिव्य शक्ति से उद्धार किया, माहेन्द्र द्वारा किये गए उद्धार से दस करोड़ सागरोपम व्यतीत होने पर ब्रह्मेन्द्र ने पंचम उद्धार किया।

छट्ठा उद्धार

तत्पश्चात् एकबार चमरेन्द्र आदि इन्द्र स्वेच्छा से नंदीश्वर द्वीप गये थे। वहाँ दो विद्याधर मुनिराज तीर्थयात्रा करने आये थे। उन्होंने पुंडरीकगिरि की महिमा चमरेन्द्र आदि को कही। ऐसे तीर्थ की यात्रा करने को उत्कंठित होकर दोंनों मुनियों के साथ वे शत्रुञ्जय पर आये। वहाँ भक्तिपूर्वक यात्रा, दान और पूजा की। सभी तीर्थों पर स्थित जिनमंदिरों का उन्होंने उद्धार किया। ब्रह्मेन्द्र के उद्धार के बाद एक लाख करोड़ सागरोपम के बाद विमलाचल गिरि पर चमरेन्द्र द्वारा छठा उद्धार हुआ।

सातवें उद्धारक : सगर चक्रवर्ती

भगवान अजितनाथ के भ्राता श्री सगर चक्रवर्ती से एक बार इन्द्र ने कहा, "हे चक्रवर्ती ! आपने भरत चक्रवर्ती की तरह जिस प्रकार पृथ्वी पर विजय प्राप्त की है, तो अब आप उनकी तरह संघपति बनो।" यह सुन सगरचक्री तीर्थयात्रा के लिए उद्यत हुए। सौधर्मेन्द्र ने राजा को श्री आदिनाथ भगवान की रत्नमय प्रतिमा युक्त एक श्रेष्ठ देवालय दिया। फिर सगरचक्री ने चतुर्विध संघ के साथ शुभ मुहूर्त में यात्रा हेतु प्रस्थान किया। गणधर, मुनिवर, श्रावक-श्राविकाएँ, महीधर, मांडलिक राजा, गायक, धर्मप्रशंसक, नर्तक एवं विदुषक पुरुषों के साथ सगरचक्रवर्ती चक्र के दिखाये मार्ग पर आगे-आगे चलने लगे।

तीर्थयात्रा में प्रत्येक नगर, ग्राम में श्री जिनेश्वर की पूजा करते-करते, मुनियों की वंदना करते हुए, दान देते हुए श्री सिद्धाचल समीप पहुँच गए। वहाँ आनंदपुर नगर में सगर राजा ने तीर्थ एवं प्रभु की तथा संघ की पूजा की और साधर्मिक वात्सल्य किया। फिर देवालय को आगे रख संघ के साथ महोत्सव पूर्वक तीर्थ की तीन प्रदक्षिणा की। फिर सगर राजा पूर्व दिशा से और अन्य लोग अपनी शक्ति अनुसार विभिन्न पथ से गिरि पर चढने लगे। चक्रवर्ती

सिद्धाचलगिरि पर पहुँचे, तभी इन्द्र भी से वहां पहुंचे। दोनों ही रायण वृक्ष के नीचे परस्पर मिले।

इस ओर जह्नु के पुत्र 'भगीरथ, चक्रवर्ती की आज्ञा से सेना के साथ अष्टापद गिरि पर पहुँचे। अष्टापद पर अपने काका और पिता की भस्में देख मूर्छित हो गए। शीतोपचार करने से पुनः चेतनावस्था पाकर सत्त्वशाली ऐसे भगीरथ ने शोक त्यागकर भक्तिपूर्वक ज्वलनप्रभ नागदेव की आराधना की। आराधना से संतुष्ट होकर ज्वलनप्रभदेव नागकुमारों के साथ वहाँ प्रकट हुए। भगीरथ राजा ने सुगंधित पदार्थों से और स्तुति से उनकी पूजा-अर्चना की, इससे प्रसन्न होकर नागपति ने कहा, - "हे भगीरथ! जह्नुकुमार आदि को खाई खोदने से रोकने पर भी वे न रुके तब मैंने उन्हें जलाकर भस्म कर दिया। उन्होंने पूर्व में ऐसे ही कर्म उपार्जित किये थे। अब आप उनका अंतिम संस्कार करो। एवं पृथ्वी को डूबोने वाली ऐसी गंगा नदी को मुख्य प्रवाह में ले जाओ।" ऐसा कहकर वह अपने स्थान पर चले गए। फिर राजा भगीरथ ने अपने पूर्वजों की भस्म गंगा में डाली, तभी से विश्व में "पितृ क्रिया" का व्यवहार जगत में प्रारंभ हुआ। पूर्वजों की उत्तरक्रिया करके राजा भगीरथ गंगा के उन्मार्गी प्रवाह को दंडरत्न से मुख्य धारा में लाए।

एक बार चक्रवर्ती सगर राजा शत्रुञ्जय तीर्थ पर गये हुए हैं, ऐसा लोगों से ज्ञात होने पर इन्द्र भी गिरिराज पर आ गए। वहाँ रायण वृक्ष के नीचे इन्द्र और चक्रवर्ती का समागम हुआ। फिर हर्षोल्लास के साथ दोनों ने एक साथ आदिनाथ प्रभु की स्नात्रपूजा आदि महोत्सव किया। मरुदेवी तथा बाहुबली शिखर पर, इसी तरह तालध्वज (तलाजा), कादंब, हस्तिसेन इत्यादि सभी शिखरों पर, उन्होंने जिनेन्द्र पूजा की तथा गुरु महाराज की वाणी से मुनिभक्ति, अन्नदान, आरती, महाध्वज एवं इन्द्रोत्सव किये।

इन्द्र ने सगर राजा से कहा - 'हे चक्रवर्ती! इस शाश्वत तीर्थ में आपके पूर्वज भरतराजा के पुण्यवर्धन कार्य देखो! भविष्य में काल के प्रभाव से विवेकहीन, अधर्मी, तीर्थ का अनादर (उपेक्षा) करने वाले लोग, मणि, रत्न, सोना, चांदी के लोभ से इस मन्दिर व मूर्ति की आशातना करेंगे। अतः जह्नु की तरह, इस तीर्थ की जो कुछ भी संभव हो, रक्षा करो। तीनों लो में आपके समान

कोई सक्षम पुरुष मुझे इस समय दिखाई नहीं देता।

यह सुन सगर राजा विचार करने लगा कि 'मेरे पुत्रों ने सागर के साथ मिली गंगा नदी को लाने का पुरुषार्थ किया। तब में उनका पिता होकर सागर को लाऊँ तो पुत्रों से मैं विशेष हो जाऊँगा, नहीं लाया तो मेरा मान नष्ट हो जायेगा।' ऐसे आवेश में सगरराजा क्षणभर में यक्षों द्वारा सागर को वहाँ लाये, कई देशों को डूबोते हुए, बहुत भयंकर रूप से दिखने वाला, उछलता हुआ, अति दुःसह लवण समुद्र जम्बूद्वीप की जगती के पश्चिम द्वार से निकल कर शत्रुञ्जय गिरि के पास आया और तभी लवण समुद्र के अधिष्ठाता देव ने हाथ जोड़कर प्रणाम करके कहा – 'हे चक्रवर्ती ! आप फरमाएँ मुझे क्या करना है।'

उसी समय अवधिज्ञान से जिनवाणी याद करते हुए इन्द्र ने आकुलता से कहा, "हे चक्रवर्ती ! ठहरिये, जैसे सूर्य बिना दिन, छाया बिना वृक्ष की तरह इस तीर्थ के बिना समस्त जीवसृष्टि निर्मूल है। अष्टापद तीर्थ का मार्ग तो अवरुद्ध हो गया है, अब प्राणियों का तारणहार यही तीर्थ है। **जब तीर्थंकर देव, जैनधर्म के श्रेष्ठ आगम पृथ्वीपर नहीं रहेंगे, तब यह सिद्धगिरि ही लोगों के मन की इच्छा सफल करनेवाला होगा।**"

इन्द्र के वचन सुन चक्रवर्ती ने लवणदेव से कहा, "हे देव ! केवल निशानी के लिए समुद्र यहाँ से थोड़ी दूर रहे और आप अपने स्थान पर प्रस्थान करें।" इस प्रकार उन्हें विदा किया। फिर सगर राजा ने इन्द्र को इस तीर्थ की रक्षा का उपा य पूछा। तब इन्द्र ने कहा कि - "हे राजा ! प्रभु की इन रत्नमणिमयी मूर्तियों को स्वर्णगुफा में रखवा दो। वह गुफा प्रभु का कोष है और सभी अर्हन्त भगवान की मूर्तियाँ सोने से निर्माण कराएँ, व इसी प्रकार मन्दिर स्वर्ण व चांदी के बनवाएं। फिर मंदिर के पश्चिम की ओर स्थित सुवर्ण गुफा इन्द्र ने बताई, वहाँ प्रभु की रत्नमणिमय मूर्तियों को चक्रवर्ती राजा ने उसमें रख, उनकी पूजा के लिए यक्षों को नियुक्त किया। फिर सगर राजा ने चांदी के अरिहन्तों के मन्दिर और सुवर्ण की मूर्तियाँ बनवाई। सुभद्र नाम के शिखर पर श्री अजितनाथ भगवान का रजत मन्दिर बनवाया। वहाँ गणदर, श्रावक एवं देवों ने मिलकर पूजा पूर्वक अतिसुन्दर प्रतिष्ठा महोत्सव किया।

आठवें उद्धारक : व्यंतरेन्द्र

अब चौथे तीर्थंकर श्री अभिनन्दन स्वामी भगवान पृथ्वी को पवित्र करते हुए श्री शत्रुंजय गिरि पर पधारे। रायण वृक्ष के नीचे देवताओं ने उनका समवसरण बनाया। वहाँ सिंहासन पर बैठकर प्रभु ने देशना के द्वारा कहा, **"अरिहंतों की मुक्ति के बाद केवलज्ञान रूपी धर्मनाश होने पर यह तीर्थ ही सर्व कल्याणकारी होगा। जो इस तीर्थ में आकर भक्ति से भगवान का ध्यान और पूजन करता है, वह अल्प समय में ही अजरामर पद प्राप्त करता है। जो यहाँ मंदिर, मूर्तियाँ, पात्रदान, अनुकंपादान, आदि करता है वह तत्काल इस लोक व परलोक में सुख प्राप्त करता है।"** प्रभु की देशना सुन, व्यंतरपतियों ने तत्काल भक्ति से उत्साहित हो जीर्ण हुए तीर्थ के मन्दिरों का उद्धार किया। इस तरह शत्रुंजय तीर्थ पर व्यंतरेन्द्रों ने आठवाँ उद्धार किया।

नौवें उद्धारक : चन्द्रयशा राजा

शशिप्रभा नगरी के राजा चंद्रशेखर जो कि संसार त्याग कर मुनि बन गये थे। एक बार चन्द्रशेखर मुनि विहार करते हुए भगवंत के चरणों से पवित्र हुई चन्द्रप्रभा नगरी में आये। ज्ञात होने पर उनका पूर्वावस्था का पुत्र चन्दयशा राजा पाँचसौ राजाओं के साथ उन्हें वंदन करने आये। तब चन्द्रशेखर मुनिराज ने उनसे कहा, "यहाँ आँठवे चंद्रप्रभ भगवान रहे थे। तभी से यह उत्तम तीर्थ चन्द्रप्रभास नाम से (गुजरात में वेरावल के समीप हाल प्रभास पाटन है) पृथ्वी पर प्रसिद्ध होगा।

यहाँ देवयोग से जो कोई मृत्यु पाता है वो मनुष्य स्वर्ग में जाता है। श्री तीर्थंकर के चरणों से पवित्र प्रदेश में मरनेवाले मनुष्य के शरीर में कभी दुर्गन्ध उत्पन्न नहीं होती है। शरीर में जन्तु-कीट गिरते नहीं एवं इस तीर्थ में मृत्यु आने पर प्राणी नरक व तिर्यंच गति में नहीं जाते हैं। उन्हें मनुष्यगति, देवगति या मोक्ष प्राप्त होता है।

इस प्रकार धर्मोपदेश देकर मुनि ने वहाँ से विहार कर दिया। उसके बाद चन्द्रयशा राजा ने हर्षोल्लास से, उस स्थान पर मंदिर बनाकर चन्द्रप्रभ प्रभु की चन्द्रकांत मणिमय मूर्ति बनवाई तथा पिता चन्द्रशेखर की भी मणिमय मूर्ति बनवाई और चन्द्रप्रभ भगवान का चन्द्र लांछन है वैसा ही पिता के ललाट पर

चन्द्र का चिह्न बनवाया। मूर्ति व मंदिर दोनों के प्रतिष्ठा उत्सव भी ठाट-बाट से किये।

उसके बाद चन्द्रयशा शुभ दिन में, शुभ भावनापूर्वक सगर राजा की तरह संघ सहित तीर्थयात्रा करने चले। कई दिनों तक गुरु की आज्ञानुसार चलते हुए शत्रुंजय तीर्थ पर आकर विधिपूर्वक दान, पूजन आदि कार्य किये। वहाँ कितने ही जीर्ण-शीर्ण हो चुके मन्दिरों को देख, चन्द्रयशा ने आदरपूर्वक मंदिरों का उद्धार किया। पुण्डरीक, रैवत, आबू और बाहुबली आदि सभी शिखरों का भक्ति से उद्धार किया। इस प्रकार सभी तीर्थों की यात्रा और उद्धार कर चन्द्रयशा राजा ने सद्गुरु के पास दीक्षा ग्रहण की। लाख पूर्व तक दीक्षा का पालन किया व आठकर्मों का क्षयकर केवलज्ञान प्राप्त कर अंत में मोक्ष-सुख प्राप्त किया।

दसवें उद्धारक : चक्रधर राजा

एक बार सोलहवें तीर्थंकर चक्रवर्ती श्रीशांतिनाथ भगवान क्रमशः हस्तिनापुर आये। प्रभु के आगमन को जानकर उनके पुत्र चक्रधर राजा परिवार के साथ प्रभु को वंदन करने आए। नमस्कार व स्तुति कर सभी वहाँ बैठे। प्रभु ने देशना दी, "शील, शत्रुंजय पर्वत, समता, जिनसेवा, संघ, संघपति का पद ये शिवलक्ष्मी के साधनरुप हैं।"

यह सुनकर चक्रधर ने खड़े होकर प्रभु से कहा, - "हे प्रभो ! मुझे संघपति की पदवी दीजिये।" ऐसा सुन देवों द्वारा लाया हुआ अक्षतयुक्त वासक्षेप चक्रधर के मस्तक पर डाला। चक्रधर, ने वहाँ बहुत बड़ा उत्सव किया। फिर प्रभु का आशीर्वाद लेकर चक्रधर ने संघ को निमंत्रण देकर बुलाया। इन्द्र द्वारा निर्मित देवालय के साथ शुभ मुहूर्त में संघ सहित वहाँ से रवाना हुए। गाँव-गाँव में जिन प्रतिमा और मुनियों को वन्दना करते नियमित चलकर सौराष्ट्र देश में आकर तीर्थ के समीप पहुँचे।

राजा चक्रधर को यह तीर्थ देख बहुत आनंद हुआ। यह जान इन्द्र ने कहा, - "हे राजा ! आपके पूर्वजों का यह तीर्थ अधिक समय होने से जीर्ण-शीर्ण हो गया है, एवं आप स्वयं प्रभु के पुत्र हो, अतः इस तीर्थ का आपको उद्धार करना चाहिए।" यह सुन चक्रधर राजा ने जीर्ण हुए मन्दिर नये बनवाये

। "अब आप इस तीर्थ के जीर्णोद्धारक हुए," ऐसा कह इन्द्र ने सोने--चांदी की पुष्पवृष्टि कर सहर्ष बहुमान किया इस तरह दसवाँ उद्धार संपन्न हुआ।

ग्यारहवें उद्धारक रामचन्द्रजी

श्री राम ने पाँचों प्रकार के दान देकर बहुत अच्छे कर्म उपार्जित किये। स्थान-स्थान पर मंदिरों में वंदना करते-करते अंत में शत्रुंजय गिरि पर आकर जिनेश्वर भगवान को वंदना की। वहाँ विशाल भव्य मंदिर निर्माण कर विधिपूर्वक यात्रा करके संघ के साथ नीचे उतरे। इस प्रकार ग्यारहवाँ उद्धार रामचन्द्रजी द्वारा हुआ।

बारहवें उद्धारक पांडव :

श्री नेमिनाथ प्रभु से शत्रुंजय गिरि का माहात्म्य श्रवण कर पांडवों ने अपना जन्म को सार्थक करने के लिए इस तीर्थ की यात्रार्थ इच्छा की। उस समय उनके पिता पांडु ने स्वर्ग में से आकर प्रेम पूर्वक कहा कि - "हे वत्सों ! यह आपका मनोरथ शुभ परिणामदायक होगा। अतः आप शुद्ध हृदय से पुंडरीक गिरि की यात्रा करो, उसमें तुम जैसे पुण्यवानों को मैं सहायता करूंग।" पिता की ऐसी आज्ञा होने से पांडवों ने प्रसन्न होकर यात्रा में सर्व राजाओं को आमंत्रित किया। अतः वे समस्त नृप हर्षित हो बहुत समृद्धि एवं परिवार लेकर हस्तिनापुर आये। पांडवों ने उनका सत्कार किया। फिर शुभ दिन मणिमय प्रभु की मूर्ति लेकर सोने के देवालय को संघ के आगे रख अन्य वाहनों के साथ हस्तिनापुर से प्रयाण किया।

मार्ग में साधर्मिक वात्सल्य, गुरु, ज्ञान एवं देव की पूजा तथा जीर्ण मंदिरों का उद्धार करते हुए वे पांडव सिद्धगिरि की ओर अग्रसर हुए। सौराष्ट्र देश की सीमा तक समक्ष आकर प्रीतिमय पांडवों को यादवों सहित कृष्ण आनन्द से मिले। वहाँ से आगे बढते तीर्थ के समीप आकर उन्होंने विधिपूर्वक तीर्थपूजा और संघपूजा की। हर्ष से शत्रुंजय गिरि पर चढे। मुख्य शिखर को और राजदनी(रायण) वृक्ष को तीन तीन प्रदक्षिणा कर सुर-असुर द्वारा पूजित प्रभु की चरण पादुका को उन्होंने प्रणाम किया। फिर कृष्ण और युधिष्ठिर ने वरदत्त गुरु के साथ हर्षपूर्वक युगादि प्रभु के चैत्य में प्रवेश किया। तब पाषाणों की संधि शीतल होने से उस में तृणांकुर उग गये थे, ऐसा जीर्ण-शीर्ण चैत्य

और चैत्य के मध्य में भगवान की मूर्ति देख दोनों धर्मवीरों को सर्वाधिक दुःख हुआ।

कृष्ण ने युधिष्ठिर को कहा, "देखो ! हम राज्य पर होते हुए भी काल के माहात्म्य से यह तीर्थ कितना जीर्ण हो गया है।" उस समय अकस्मात् स्वर्ग से पाण्डुदेव ने आकर प्रसन्नतापूर्वक कहा - "हे कृष्ण ! तुम हर दृष्टि से पराक्रमी एवं कार्य में परिपूर्ण हो। सम्यक् दृष्टि वेसे तुमने पूर्वे रैवताचल का उद्धार कर फल पाया है, तो मेरे पुत्र को इस पुंडरीकगिरि के उद्धार का फल दीजिये।" कृष्ण ने सहर्ष कहा, "हे पांडुदेव ! इसमें आपको प्रार्थना किस लिए करनी पडे ? क्योंकि आपके पुत्र पांडव वो हम हैं, और हम भी पांडव ही हैं। हमारे में पूर्व से ही कोई अन्तर नहीं है।" फिर प्रसन्न हुए वे पांडुदेव कृष्ण के चित्त की प्रशंसा करते हुए युधिष्ठिर को एक मणि देकर शीघ्र अन्तर्धान हो गये।

तत्पश्चात् उन्होने सानन्द कारीगर बुलाकर शाश्वत मंदिर जैसा आदिनाथ प्रभु का एक विशाल मन्दिर बनवाया। फिर पारिजात वृक्ष की शाखा का एक शंकु करके पांडुदेव प्रदत्त मणिक्य भगवान की प्रतिमा के हृदय पर स्थापित किया। फिर सुगंधित द्रव्यों से शिल्पी से पांडवों ने प्रभु का नया बिम्ब बनवाया। धर्मकुमार ने भी वरदत्त गणधर प्रदत्त शुभ लग्न में प्रभु के चैत्य और बिम्ब की प्रतिष्ठा करवाई। फिर प्रभु के लिए अलंकार उनके ही द्वारा बनवाये और प्रभु की अष्टप्रकारी पूजा की। मन्दिर पर धर्म के परम लक्षण रूप महाध्वज चढ़ाया। हर्ष से याचकों को इच्छानुसार दान दिया और चतुर्विध संघ की पूजा की। फिर इन्द्रोत्सव कर चामर, छत्र प्रभु के समक्ष रखे। प्रभु की आरती उतार कर धर्मपुत्र ने पुष्पकल दान दिया। इस प्रकार धर्मकुमार सभी धर्मकार्य कर अनुमोदन करते सर्व राजाओं के साथ गिरिराज से उतरे।

थावच्चापुत्र, शुकाचार्य एवं शैलक आदि मुनियों ने शत्रुंजय तीर्थ पर मोक्ष प्राप्त किया। जिससे तीर्थ अतिवंदनीय है और नाम ग्रहण मात्र से भी प्रबल कर्म के मर्म का भेदक है। **(उपदेश प्रसाद ग्रंथ)**

प्राचीन तीर्थ कुंभारियाजी

राजस्थान के प्रसिद्ध आबूरोड स्टेशन से १४ मील दूर तथा गुजरात के सुप्रसिद्ध तीर्थधाम अंबाजी से २ किलोमीटर दूर कुंभारिया नामक गाँव है। प्राचीन शिलालेख में आलेखित "आरासण" ही यह कुंभारिया है। शिलालेखों से पता चलता है कि, सत्रहवीं शताब्दी तक यह गाँव "आरासण" के नाम से प्रसिद्ध था। इसके स्थान पर "कुंभारिया" नाम क्यों पड़ा यह जाना नहीं जा सका है। इतिहासकार डॉ. भांडारकर कहते हैं हि, "कुंभारिया के आसपास अवशेष पडे हुए हैं उन पर से यह अनुमान निकलता है कि यहाँ किसी जमाने में बहुत से जिनमंदिर होना चाहिए"। इतिहासवेत्ता फार्बस साहब लिखते हैं कि, "भूकंप के कारण आरासण के बहुत से मंदिर ध्वस्त हो गए होंगे" परंतु इस विषय में कोई प्रमाण नहीं मिलता। फिर भी एक जमाने में यह गाँव बड़ा नगर और व्यापारिक स्थल हो सकता है, यहाँ के लोग कब, क्यों और किस कारण से चले गए यह जानने का कोई साधन नहीं है। वर्तमान में तो मात्र छोटी सी बस्ती और अन्य देवालय तथा धर्मस्थानों से जीवंत हुए इश प्रदेश में ५ जिनमंदिर एक ही संकुल में हैं। आरासण गाँव की स्थापना लगभग ११ वी शताब्दी के द्वितीय चरण के आरंभ मे हुई होगी। यहाँ प्राप्त होने वाले संवत् १०८७ (ई.स. १०३१) के पुराने से पुराने प्रस्तर लेख में आरासण नगर पाटणपति, चौलुक्यवंशी महाराज भीमसेन प्रथम के अधिन होना बताया गया है। खरतरगच्छ पट्टावली में विमलमंत्री द्वारा आरासण में अंबिका देवी का मंदिर निर्माण करवाने का उल्लेख मिलता है। वह मंदिर अंबाजी में स्थित अंबिका का मंदिर है या अन्य कोई यह कहना कठिन है। मंत्रीश्वर विमल का कुल धनुवाहिनी अर्थात् 'चंडिका' की कुलदेवी के रूप में पूजा करता था। यह बात जैन ग्रंथों की प्रशस्तियों-प्रबंधों के द्वारा सुविदित है। दूसरी ओर मंत्रीश्वर के समय की जैन यक्षिणी अंबिका की दो प्रतिमाएँ आबू पर विमलवसही में उपलब्ध होने के कारण जैन मतानुसार मंत्रीश्वर अंबिका की भी उपासना करते होंगे। (स्व.) मुनि श्री पुण्यविजयजी को जैसलमेर के भंडार से प्राप्त हुई एक पुरानी ताडपत्रीय में प्रतिमा चंद्रावती के दंडनायक विमल ने आबू पर जिनमंदिर निर्मित करवाया उसके पूर्व आरासण में आदीश्वर देव का मंदिर बनवाया था इसका उल्लेख सुनने को मिलता है। तथा १५ शताब्दी

में रचित खीमा कृत चैत्यपरिपाटी में, शीलविजयजी तीर्थमाला संवत् १७२२ (ई.स. १६६६ पश्चात्) में तथा सौभाग्यविजयजी की तीर्थमाला संवत् १७५० (ई.स. १६९४) में आरासण में विमलमंत्री द्वारा निर्मित आदिनाथ मंदिर का विमलवसही या विमलविहार का निर्देश है। मंत्रीश्वर द्वारा मंदिर निर्मित करवाने के बाद यहाँ ११ वीं शताब्दी के संगमरमर से लेकर १३वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक आरस के अन्य चार मंदिर बने हैं।

आरासण में प्रवेश करने पर उत्तर-दक्षिण के मार्ग के अंत मे सबसे पहले भगवान नेमिनाथ का मंदिर दिखाई देता हैं। नेमिनाथ के जिनालय से ठीक ईशान कोण में इस समय शांतिनाथ का मंदिर है। इस मंदिर में अग्निकोण में महावीर स्वामी का मंदिर है, और उसके बगल में अग्निकोण में ही पार्श्वनाथ भगवान का मंदिर है, जबकि संभवनाथ का मंदिर नेमिनाथ के जिनालय और अन्य सभी से कुछ दूर लगभग वायव्य कोण में स्थित हैं।

ये पाँचों मंदिर उत्तराभिमुख हैं, भव्य और ऐतिहासिक हैं। इनकी स्थापत्य कला आज भी दर्शनार्थियों को आबू के देलवाडा मंदिरों के समान ही मन को मोहती है।

श्री नेमिनाथ भगवान का जिनालय

कुंभारिया के पाँचों जिनमंदिर में यह मंदिर सबसे बड़ा, उन्नत और विशाल है। यह मंदिर मूल गर्भगृह, विशाल रंगमंडप, दशचौकी, सभामंडप, गोखर, शृंगार चौकी दोनो और के बड़े गर्भगृह चौवीस देवकुलिकाओं के विशाल रंगमंडप, शिखर और कोट से युक्त हैं। मंदिर का द्वार उत्तर दिशा में है।

मंदिर में बाहर के प्रवेशद्वार से प्रवेश करने पर रंगमंडप तक जाने के लिए सीढियाँ हैं। पायदानों पर नोबतखाना का झरोंखा है। मंदिर का शिखर उन्नत और विशाल है। इसका शिखर तारंगा के पहाड़ पर स्थित श्री अजितनाथ भगवान के जिनालय के शिखर से मिलता जुलता है। पूरा शिखर संगमरमर पत्थर से बना हुआ है।

: मंदिर की मूर्तियाँ और लेख :

मंदिर की आकृति इतनी सुंदर औऱ नपीतुली है कि, मंदिर के प्रवेशद्वार पर से भी मूलनायक भगवान के दर्शन हो सकते हैं।

मूलगर्भगृह में मूलनायक श्री नेमिनाथ भगवान की भव्य और मनोहर मूर्ति बिराजमान है। उनके आसपास पत्थर का एक तीर्थी का बड़ा परिकर था और दो बड़ी इन्द्र की मूर्तियाँ भी थीं जीर्णोद्धर के समय खंडित होने पर वे मंदिर के पीछे के परिक्रमा मार्ग पर रख दी गई। इन मूलनायक की मूर्ति के प्रस्तारासन पर संवत-१६७५ में आचार्य विजयदेवसूरि के हाथ से प्रतिष्ठित होने का लेख है। गूढमंडप में बड़े परिकर से युक्त चार कायोत्सर्ग प्रतिमाएँ हैं। उसमें मुख्यद्वार के समीपस्थ कायोत्सर्ग प्रतिमा पर संवत्-१२१४ के लेख हैं। उनमें "आरासण नगर-नेमिनाथ चैत्य में इस कायोत्सर्ग प्रतिमा की स्थापना किये जाने का उल्लेख हैं। अन्य दो कायोत्सर्ग प्रतिमाओं पर संवत्-२०१४ को लेख हैं।

संवत-१३०१ के लेखवाला १७० जिन का एक सुंदर पट है। परिकर से अलग हुई ४ कायोत्सर्ग प्रतिमा और १ यक्ष की प्रतिमा है। कायोत्सर्ग के पास भींतस्तम्भ में दो मूर्तियाँ है और १ धातु की पंचतीर्थी है।

यहाँ छः चौकी के स्थान पर दो पंक्तियों में दस चौकी है। उसमें बायें हाथ की ओर चौकी के आले में नंदीश्वरद्वीप की सुंदर रचना की गई है। उस पर संवत् १३२३ का लेख है। उसकी बगल में एक सुंदर आले में एक कायोत्सर्ग प्रतिमा है। जिसके ऊपर एक जिन प्रतिमा बिराजमान है।

दायें हाथ की और छः चौकी के एक मंदिर में अंबाजी की एक बड़ी मूर्ति है। छः चौकी से बायें हाथ की ओर नक्काशी युक्त एक स्तंभ पर संवत १३१० की वैशाख सुदी ५ का लेख हैं। उस स्थंभ पर 'पोरवाल श्रेष्ठी आसपाल ने आरासण नगर के अरिष्टनेमि जिनालय में चंद्रगच्छीय श्री रत्नप्रभसूरि के उपदेश से एक स्तंभ यथाशक्ति बनवाया' यह लिखा है। छः चौकी के सामने के दो आले खाली हैं। उनमें से एक में केवल परिकर है। पास के तीन आलें मूर्ति विहीन हैं। सभामंडप की बायीं और गर्भगृह में मूलनायक श्री आदीश्वर भगवान की आरस पत्थर से बनी एकतीर्थी परिकर युक्त मनोहर प्राचीन प्रतिमा है। इस प्रतिमा की श्री विजयदेवसूरि द्वारा संवत १६७६ में प्रतिष्ठा करने का उल्लेख है। उस गर्भगृह के पास के दो आलों में मूर्तियाँ नहीं हैं किन्तु संवत् १३३५ के लेखवाला परिकर उपस्थित है।

दायें हाथ की ओर के आले में मूलनायक श्री पार्श्वनाथ भगवान की प्राचीन एक तीर्थ के परिकर से युक्त भव्य और् नयनाभिराम प्रतिमा है । यह प्रतिमा इतनी बड़ी है कि नीचे खड़े रहकर भगवान के मस्तक की पूजा नहीं की जा सकती । इस कारण उसके पास लकड़ी का एक पायदान रखा गया है । मूलगर्भगृह के पीछे के भाग में मंदिर की दीवार पर सुंदर नक्काशी की गई है । मंदिर के पीछे की परिक्रमा में परिकर, सैकड़ों टुकडें, प्रस्तरासन और गादी के टुकड़ें, कायोत्सर्ग प्रतिमाएँ, परिकर से अलग हुई खंडित-अखंडित इन्द्र प्रतिमा अनेक स्थंभो से युक्त नक्काशीदार सुंदर बंदनवार आदि पड़े हुए हैं साथ ही इसमें जिनमातृपट, चोवीशी के पट हैं, जिसमें शताधिक लेख भी हैं। एख लेख संवत १२०४ का है अर्थात् उससे पहले यह मंदिर बना होगा, क्योंकि उसमें "आरासण-अरिष्टनेमिचैत्य" वैसा स्पष्ट उल्लेख किया हुआ है ।

मंदिर के पीछे के भाग के आले में "समडीविहार" के पट के नीचे का आधा भाग चिपकाया हुआ है। इस पट में लंका के राजा बैठे हुए हैं। उनकी गोद में राजकुमारी है । उपहार लेकर खड़े हुए जैन गृहस्थ, पादुका और अश्वादि की आकृतियाँ आरस पत्थर में उकेरित की गई हैं ।

शेष ऊपर का आधा पट यहाँ देरियों के पास जहाँ देरियों के प्रस्तारासन आदि निकाल दिए गए हैं वहाँ दीवार के पास रखा हुआ हैं, उसमें समुद्र, नर्मदा नदी, झाडियाँ, चील, व्याघ, जैनाचार्य और जहाज की सुंदर आकृतियाँ चित्रित हैं।

इन दोनों भागों को जोड़कर एक ही स्थान पर लगाने से लेख शिल्पकृति सुरक्षित रह सकती है। आबू के जिनमंदिर के पट जैसा ही यह पट है, उस पर संवत् १३३८ का लेख हैं।

इस देवालय के व्यास की परिधि में चारों और गज युग्म की गजसर है तथा नर-नारी के युग्म की नरसर है। इसके अलावा देव, यक्ष, यक्षिणी के बड़े बड़े पूतले भी स्थापित किए गए हैं, कुछ स्थानों पर युग्मों की आकृतियाँ भी कर्तृरित दिखाई देती हैं ।

मंदिर के गूंजद के घेराव के नीचे चारों और पीठिकाएँ रखी गई है । मंदिर की देवकुलिकाओं के अग्रभाग के छोर पर स्थित स्तंभ तथा देवगृह की परिधि के स्तंभ आबू पर्वत पर स्थित देलवाडा के विमलसही मंदिर के जैसे ही हैं ।

रंगमंडप की दूसरी ओर ऊपर के दरवाजे पर तथा किनारे के दो स्थंभों के बीच की मेहराब पर मकरों की मुखाकृतियाँ रखी गई हैं। वह तोरण ऊपर के पत्थर की नीचे की सतह को स्पर्श करती है। यह तोरण आबू के विमलवसही मंदिर की तोरण जैसी ही है।

मंडप के स्थंभो की तथा परिधि के स्तंभों की रिक्त मेहराबें, जो गूढमंडप के हार के ठीक सामने स्थित है और ऊपर की पट्टिका के नीचे स्थित बारसोत से पता चलता है कि, पहले यहाँ ऐसे अन्य कुछ तोरण थे परंतु आज वे नष्ट हो गये लगती हैं।

मंदिर में सब मिलाकर ९४ स्थंभ है। जिन में २२ स्थंभ सुंदर नक्षीशवाले हैं और अन्य स्थंभ सादा हैं। नक्काशीवाले स्थंभों में देवी-देवता और विद्याधरों की आकृतियाँ बनी हुई हैं।

रंगमंडप में पूजा-महोत्सव के समय स्त्रियों के बैठने के लिए झरोखें भी हैं।

यहाँ सूक्ष्म द्रष्टि से देखने पर पूराने नक्काशी काम के स्थान पर नवीन काम भी बड़ी सफाई से किया गया लगता है। सभामंडप के गूंबद मे तीन सौ वर्ष पहले रंगरोगान का काम किया गया है वह मानो ताजा ही किया गया हो ऐसा लगता है। रंगमंडप में भी नक्काशी के ऊपर रंगादि किया गया है। इस रंगमंडप और चौकी की नक्काशी आबू के देलवाड़ा मंदिर की नक्काशी जितनी ही अत्यंत सुंदर है।

मंडप के मध्यभाग के ऊपर आधुनिक छत है। जिसका आकार घूम्मट जैसा है। उसके ऊपर रंग कार्य किया होने के कारण वह शोभायमान है। आसपास एक बाँस का पिंजरा रखा हुआ है। जिसके कारण चमगादड़ या अन्य पक्षी प्रवेश नहीं कर सकते।

मंदिर की देवकुलिकाओं की दीवारें प्राचीन है परंतु शिखर तथा गूढमंडप के बाहर का भाग पीछे से बनाया गया है ऐसा लगता है। उसे ईंट से चुनकर ऊपर से सपाट कर संगमरमर जैसा समतल बना दिया है। मंडप के दूसरे भाग की छत तथा बरामदे की छत सादी या अर्वाचीन है। मूलगर्भगृह के

दायीं और ऊपर के भाग पर बीम को आधार देती जो तीन मेहराबें चुनी हुई हैं वे साथ के स्तंभ तक जुडी हुई हैं।

: मंदिर निर्मात :

श्री धर्मसागर गणि द्वारा रचित 'तपागच्छ-पट्टावली' में बताया गया है कि, वादिदेवसूरि ने (समय विक्रमसंवत-११७४ से १२२६) आरासण में श्री नेमिनाथ भगवान की प्रतिष्ठा की थी।

'उपदेश सप्तति' ग्रंथानुसार पासिल नामक श्रेष्ठि ने इस श्री नेमिनाथ भगवान के मंदिर का निर्माण करवाया और वादिदेवसूरि ने इसकी प्रतिष्ठा की थी।

: श्री महावीरस्वामी भगवान का मंदिर :

श्री नेमिनाथ भगवान के मंदिर के पूर्व में ढलान से नीचे के भाग में उत्तरदिशा के द्वारवाला श्री महावीरस्वामी भगवान का मंदिर है। इस मंदिर के पूर्व और पश्चिम की ओर भी द्वार हैं परंतु वे बंद रखे जाते हैं। पूर्व की ओर का द्वार पेढी के आगे के चौक में खुलता है।

यह मंदिर मूलगर्भगृह, गूढमंडप, छःचौकी, सभामंडप, शृंगारचौकियाँ तथा उसके सामने स्थित आठ आलें और दोनों ओर की आठ-आठ देवकुलिकाओं सहित कुल २४ देहरियों और शिखर से सुशोभित है। सम्पूर्ण मंदिर आरस पत्थर का बना हुआ है। मूलगर्भगृह में मूलनायक श्री महावीरस्वामी भगवान की एकतीर्थी के परिकर से युक्त मनोहर और भव्य प्रतिमा बिराजमान है। मूलनायक की मूर्ति पर संवत् १६७५ का श्री विजयदेवसूरि द्वारा इस आरासण नगर में प्रतिष्ठा किए जाने का लेख है। मूलनायक के परिकर की गादी के नीचे संवत् ११२० का प्राचीन लिपि में लेख हैं। उसमें भी आरासण के नाम का उल्लेख किया है। इस पर से यह जाना जा सकता है कि, यह मंदिर लगभग उस समय का या उससे पहले का निर्मित होना चाहिए।

मूलनायक की दोनों ओर एक-एक यक्ष की तथा अंबा माता की प्रतिमा है।

गूढमंडप में परिकर युक्त दो भव्य कायोत्सर्ग प्रतिमाएँ हैं, उनपर लिखे हुए लेख कुछ मिट गए हैं परंतु उनके संवत् १११८ के लेख होने का स्पष्ट पता चलता है। यहाँ से मिले प्रतिमालेखों में ये लेख सबसे प्राचीन हैं। इस लेख से

भी पुराने संवत १०८७ के एक लेख के बारे में मुनि श्री जयंतविजयजी ने अपनी पुस्तक कुंभारिया के परिशिष्ट में लिखा है। उस लेख से पता चलता है कि यह मंदिर संवत-१०८७ से पहले निर्मित हो चुका था।

मूलगर्भगृह की बारसाख पर दोनों और छोटी छोटी एक एक कायोत्सर्ग की प्रतिमाएँ बनाई गई हैं। वहाँ परिकर से अलग हुई ३ कायोत्सर्ग प्रतिमाएँ भी हैं।

सभी देवकुलिकाएँ तथा आलें मिलकर कुल २४ हैं। उनमें से एक में परिकर नही है, तीन देरियों में परिकर हैं वे अधूरे हैं। एक में तीन तीर्थी का परिकर है। शेष अन्य सभी देरियों में पंचतीर्थी के पूरे परिकर लगे हुए हैं। देरियों की प्रायः सभी प्रस्तरामन गादी पर संवत्-११४० से संवत्-११४५ तक के लेख मिलते हैं। उपरोक्त परिकरों में जिनप्रतिमाएँ नहीं थीं परंतु महुडिया पादर नामक गाँव के खंडहर बने जिनमंदिर से लाई गई प्रतिमाएं यहाँ की देरियों में स्थापित की गई है।

कुंभारिया से लगभग २० गाँव दूर दक्षिण में दांता राज्य की सीमा में महुडिया पादर नामक गाँव है। उसके पास के जंगल में लगभग आधी मील जितनी जगह में मंदिर के खंडहर में एक बड़ा पत्थर उखाड़ा जा रहा था तब पत्थर के उखाड़ने पर एख भूगर्भ दिखा। दांता के राजा को इस बात का पता चलने पर उसने उस स्थान पर सैनिकों का पहरा लगवा दिया और संवत् २००० (ई.स. १९४४) में दांता राज्य की ओर से जंगल साफ करवाकर भूगर्भ का द्वार खोला गया तो उसमें से जिनप्रतिमाएँ निकली और सभी प्रतिमाएँ दांता में लाई गई। वे सभी प्रतिमाएँ श्वेतांबर जैन वर्ग की होने का निर्णय होने पर राज्य ने दांता के श्री जैन संघ को वे प्रतिमाएँ सौंप दी। वे प्रतिमाएँ कुंभारिया के जिनालय में स्थापित करने की सूचना मिलने पर दांता के श्री संघ ने अहमदाबाद की शेठ आणंदजी कल्याणजी की पेढी को सूचना दी और कुंभारियाजी में भी सूचना भेजी। संवत् २००० (ई.स. १९४४) की माघ महिने की वदि १३ के दिन उन सभी प्रतिमाओं को गाडे में रखकर कुंभारियाजी लेकर आए। चक्षु टीके से विभूषित कर संवत् २००१ की ज्येष्ठ सुदि १० के दिन अठारह अभिषेक कर सभी प्रतिमाओं को श्री महावीरस्वामी के मंदिर की देहरियों में स्थापित किया।

मंदिर के दक्षिण दिशा के द्वार से प्रवेश करने पर बायें हाथ की ओर एक समवसरण की देहरी है। उसमें प्रतिमा नहीं हैं परंतु समवसरण की नक्काशीयुक्त रचना पीले आरस पत्थर पर की गई है और उश छत्रीवालें समवसरण में तीन गढ और पर्षदा की स्पष्ट आकृतियाँ उकेरी गई हैं।

रंगमंडप के बीच के भाग में ऊँचाई पर एक नक्काशीदार झुम्मर है, जो टूटा हुआ है। वह रंगा हुआ और सफेद है। इस झुम्मर का आधार अष्टकोणाकृति में स्थित परिधि है।

साथ ही आबू के विमलशाह के देवालय के स्थंभ जैसे स्थंभ हैं। शेष साधारण हैं। पहले इन स्थंभो की प्रत्येक जोड़ी को मकर के मुख से निकलती तोरणद्वार से शृंगारित किया गया था परंतु वर्तमान में एक को छोड़कर सभी तोरण नष्ट हो गयें हैं। रंगमंडप की दूसरे भाग की छत के अलग अलग खंड पड़े हुए हैं। जिन पर आबू के विमलशाह के देवालय में हैं वैसे जैन चरित्रों के भिन्न-भिन्न द्रश्य चित्रित किए गए हैं।

छह चौकी तथा सभामंडप और परिधि की देहरियों के बीच दोनों तरफ से छत के १४ खंडो में बहुत सी नक्काशी है। उनमें पाँच खंडों में सुंदर भावभंगिमाएं द्रष्टिगोचर होती है।

१. रंग मंडप और परिधिकी देहरी के बीच की छत के दायें हाथ की ओर सातवें खंड में अतीत और भविष्य की चौबीसी के माता-पिता एक एक छत पर अंकित किए गए हैं।

२. दूसरे खंड में वर्तमान चौबीसी तथा उनके माता-पिता हैं। उसी खंड में चौदह स्वप्न हैं। इंद्र महाराज ने भगवान को मेरु पर्वत पर ले जाकर गोद मैं बैठाया है और दोनों और इंद्र महाराज कलश द्वारा अभिषेक कर रहे हैं। कमठ नामक तापस पंचाग्नि का तप कर रहा है उस समय पार्श्वकुमार सेवक द्वारा लकड़ी में सर्प निकालकर बताता है। उसके बाद धरणेन्द्र भगवान को नमस्कार करने आया है। पार्श्वनाथ प्रभु का समवसरण तथा अनुत्तर विमान के जन्म आदि भाव उकेरे गए हैं।

३. तीसरी छत में श्री शांतिनाथ भगवान का समवसरण है उनके माता-पिता आदि हैं। दूसरी और नेमिनाथ भगवान के पंचकल्याणक का भाव उत्कीर्ण है।

४. छट्टे खंड में महावीरस्वामी भगवान के पिछले सत्ताईस जन्म और पंचकल्याणक तथा उनके जीवन से संबंधित विशिष्ट घटनाएँ हैं और चंदनबाला के प्रसंग जैसे कि तपस्या, कान में कील ठोकना, चंडकौशिक नाग आदि की घटनाएं हैं। सातवें खंड में भी ऋषभदेव भगवंत के पंचकल्याणक के भाव तथा चार-पाँच हाथी घोड़ें आदि विशिष्ट भाव हैं। सभी भावों पर नाम लिखे हुए हैं।

५. बायीं ओर के सातवें खंड में आचार्य महाराज सिंहासन के ऊपर बैठे हुए हैं, शिष्य नमस्कार कर रहे हैं और गुरु उनके शिर पर हाथ रखते हैं साथ ही बीच में आचार्य महाराज, जो हाथ जोड़कर नमस्कार कर रहे हैं उनके सामने -स्थापनाचार्यजी भी हैं।

इसी प्रकार पहली छत में भी ऐसी ही भावाकृतियाँ हैं।

एक छत में आचार्य महाराज उपदेश दे रहे हैं और उनके सामने बैठा चतुर्विध संघ उपदेश सुन रहा है। दूसरे भाग में आचार्य महाराज साधुओं को देशना दे रहे हों ऐसा भाव दिखता है। तीसरे भाग में देवियों की आकृतियाँ उत्कीर्ण हैं। उनके समीप के भाग में देवों के नृत्य का चित्रण है। सातवें भाग में भगवान महावीरस्वामी देशना दे रहे हैं। वहाँ गणधर भगवंत बैठे हुए हैं और श्रोता भिन्न-भिन्न वाहनों पर बैठकर देशना सुनने आ रहे हों, ऐसा भाव आलेखित है।

इन सभी भावों के नीचे संगमरमर की प्रस्तरिका में भावों को समझाने के लेख भी अंकित हैं और उनमें रंग भरा गया है।

इस प्रकार के भावों का आलेखन अन्यत्र कहीं नहीं मिलता।

सभामंडप से बाहर निकलने पर जो चौकी आती है उसमें दो आले हैं और ऊपर छोटे छः झुम्मर हैं। उसमें सभामंडप के द्वार का झुम्मर अद्भूत कलाकृति वाला है। उसमें संगमरमर के जो पर्दे उत्कीर्ण हैं उनकी नकल कागज पर भी करना असंभव है। ऐसा झुम्मर भाग्य से ही अन्यत्र देखने को मिलता है। शेष पाँच झुम्मर में भी अद्भूत नक्काशी पूर्ण भाव आलेखित हैं। उसमें लटकता हुआ रक्तकमल है और पर्दे भी उत्कीर्ण किए गए हैं।

चौकी से नीचे उतरने पर रंगमंडप के झुम्मर की नक्काशी आश्चर्यचकित कर दे वैसी है। उसमें मानो छीपें जड़ी हों ऐसा अंकन किया गया है। झुम्मर के

बीच संगमरमर का लटकता हुआ कमल के आकार का झुम्मर उत्कीर्ण किया गया है। ये सभी द्रश्य आबू के देलवाड़ा के मंदिरों से भी उत्कृष्ट हों ऐसा जान पड़ता है।

देवकुलिका की दीवारें अभी बनाई गई हैं, परंतु शिखर पुराने पत्थर के टुकड़े का बना हुआ है। गूढमंडप पुराना है। उसके पहले दोनों और द्वार तथा सीढियाँ थी। वर्तमान में द्वार बंद कर दिये गए हैं। उनके स्थान पर मात्र दो जालियाँ रखी हुई हैं, जिससे उजाला अंदर आ सकता है। गूढमंडप की बारसाख से भी बहुत उजाला आ सकता है। गूढमंडप की बारसाख पर बहुत सा नक्काशी काम है परंतु देवकुलिकाओं की बारसाख में नहीं हैं।

बायीं या पश्चिम की दो पुराने स्तंभों के साथ दो नये स्तंभ है, जो ऊपर के टूटे हुई चोखट के आधार रुप में हैं। दक्षिण कोने के पूर्व की ओर स्थित तीसरी और चौथी देवकुलिका की बारसाख दूसरे देवकुलिकाओं से अधिक नक्काशीदार हैं। तीसरी देवकुलिका के आगे, ऊपर की चौखट के नीचे की और सटी हुई एक कमानी के आधार रूप स्तंभों पर दोनों ओर 'कीचक' (ब्रेकेट्स) देखने को मिलते हैं। यह बात विशेषरूप से जानने जैसी है, क्योंकि अन्यत्र कहीं भी अग्रभाग में या देवकुलिका में ऐसी संरचना नहीं मिलती है।

श्री महावीरस्वामी भगवान के समीपस्थ मूलगर्भगृह में दो स्तंभों पर सुंदर नक्काशीवाला तोरण था वह वर्तमान में द्वार के बाहर लाकर लगा दिया गया है। उस पर संवत् १२१३ का लेख है।

: श्री पार्श्वनाथ भगवान का मंदिर :

श्री महावीरस्वामी भगवान के मंदिर के पूर्व की ओर श्री पार्श्वनाथ भगवान का भव्य और विशाल मंदिर है। इस मंदिर की आकृति श्री नेमिनाथ भगवान के मंदिर जैसी है। इस मंदिर की पश्चिम दिशा का द्वारा पेढी के आगे के चौक में आता है। और उस द्वार से विशेष आवागमन होने के कारण उत्तर दिशा का द्वार बंद रखा जाता है।

इस मंदिर का मूलगर्भगृह, गूढमंडप, छहचौकियाँ, सभामंडप, शृंगारचौकियाँ, दोनों ओर् की मिलाकर २४ देहरियाँ, १ आला और शिखरबंधी निर्मित है। पूरा मंदिर संगमरमर पत्थर से निर्मित है।

मूलगर्भगृह में मूलनायक श्री पार्श्वनाथ भगवान की सुंदर परिकरयुक्त एकतीर्थी प्रतिमा बिराजमान है। उसके ऊपर श्री विजयदेवसूरि द्वारा प्रतिष्ठा किए जाने का संवत्-१६७५ का लेख है।

गूढमंडप में श्री शांतिनाथ तथा श्री पार्श्वनाथ प्रभु की परिकरयुक्त दो कायोत्सर्ग प्रतिमाएँ हैं। उनके ऊपर संवत् ११७६ के लेख हैं। बायें हाथ की ओर तीन तीर्थी वाला एक रिक्त परिकर स्थापित है। उसमें मूलनायक की मूर्ति नहीं है। परिकर से अलग हुई ३ कायोत्सर्ग प्रतिमाएं और एक माता अंबाजी की भी मूर्ति है।

छह चौकियों में दोनों ओर के दो आलों में से एक आले में पूरा परिकर, स्थंभो के सहित तोरण आदि पर सुंदर नक्काशी की गई है।

गूढमंडप और सभामंडप के झुम्मर, छह चौकियों का अग्रभाग, छहचौकियाँ और सभामंडप के चार स्थंभ, एक तोरण, दोनों ओर की बीच की एक एक देहरी के द्वार, स्थंभ, झुम्मर सिर के शिखर और प्रत्येक गुंबद में सुंदर नक्काशी की गई है। स्तंभो पर देवियों, विद्याधरियों तथा अन्य की नक्काशी है।

मंदिर में उत्तर दिशा के द्वार से प्रवेश करने पर दायें हाथ की ओर मकराणा के नक्काशीदार दो स्तंभों पर मनोहर तोरण है। उनमें से एक स्तंभ पर संवत-११८१ का लेख है।

आले में प्रतिमा नहीं हैं। एक आले में केवल परिकर वाला आसन ही है।

दो देहरियों में केवल प्रस्तरासन है। परिकर नहीं है। दो देहरियों में अधूरे परिकर हैं। दो देहरियों में नक्काशीदार स्तंभो से युक्त सुंदर तोरण लगे हुए हैं। अन्य देहरियों में परिकर और प्रस्तरासन हैं। एक आले में प्रस्तरासन और परिकर की गादी है। देहरियों में परिकर की गादी पर अधिकाशतः भाग पर तेरहवीं शताब्दी के मध्यभाग के लेख हैं। संतव्-१२५९ के लेख में 'आरासण में मांडलिक परमार धारवर्षदेव का विजयी राज्य' ऐसा लिखा है।

अंतिम आले के प्रस्तरासन की गादी पर संवत्-११६१ का लेख है।

गूढमंडप के स्थंभ और बनावट महावीरस्वामी भगवान के मंदिर जैसी है परंतु श्री शांतिनाथ भगवान के मंदिर की तरह इसमें केवल चार तोरण हैं।

जिसमें से देवकुलिका के बरामदे के सामने स्थित सीढियों के ऊपर की ओर इस समय एक ही बचा है।

इसमें नेमिनाथ भगवान के जिनालय की तरह झुम्मर के आसपास बाँस की जालियाँ लगाई हुई हैं। देवकुलिका के बाहर का भाग तथा गूढमंडप का एक भाग अर्वाचीन है। सीढियों के साथ लगे हुए दो स्तंभों के मध्य एक पुरानी बारसाख गूढमंडप की पश्चिमी दीवार पर चुनी गई है परंतु यह द्वार बंद नहीं किया गया है। दीवार की दूसरी ओर ऐसी ही बारसाख लगाने का प्रयत्न किया गया हो ऐसा अनुमान होता है। चूं कि दीवार के आगे दो स्तंभ खड़े किए गए हैं।

मूल देवगृह की बारसाख पर सुंदर नक्काशी काम किया गया है परंतु उसके ऊपर बाद में गुजराती रीति के अनुसार रंग रोगान का कार्य किया गया है।

: श्री शांतिनाथ भगवान का मंदिर :

श्री महावीरस्वामी भगवान के मंदिर के आगे मार्ग छोड़कर पास में श्री शांतिनाथ भगवान का मंदिर स्थापित है। उसकी रचना भगवान महावीरस्वामी के मंदिर जैसी ही है। इस जिनालय के पूर्व और पश्चिम तथा उत्तर की और से द्वार विशेष कार्य के अतिरिक्त बंद ही रहते हैं। केवल पूर्व की ओर के द्वार से ही आवागमन होता है।

यह मंदिर मूलगर्भगृह, गूढमंडप, छहचौकियों, सभामंडप, मुख्य द्वार के दोनों ओर स्थित १६ देहरियों और १० आलें गोखरों तथा शिखर से सुशोभित है। मंदिर के पीछे का भाग खाली है। तीनों द्वारों की शृंगारचौकियाँ आदि सभी संरमरमर पत्थर् से बने हुए हैं।

मूलगर्भगृह में मूलनायक श्री शांतिनाथ भगवान की परिकर विहीन प्रतिमा बिराजमान है।

गूढमंडप में परिकर से अलग हुई ४ कायोत्सर्ग प्रतिमाएँ, २ इन्द्र की और १ हाथ जोड़कर खडे हुए श्रावक की मूर्ति है। ये सब गूढमंडप में अलग रखी गयी है।

मूलनायक के नीचे की गादी पर संतव् १३०२ का लेख है परंतु वह गादी जीर्णोद्धार के समय वहाँ लगाई गई होगी ऐसा लगता है। आरासण के

श्रावकों ने वह गादी तैयार करवाई है और उसमें श्री पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमा के प्रतिष्ठित किए जाने का उल्लेख है। जबकि मूलनायक श्री शांतिनाथ भगवान है।

छह चौकीयों में गूढमंडप के मुख्य द्वार के दोनों और सुंदर नक्काशी वाले दो गोखर हैं। उनमें से एक में एकतीर्थी का केवल परिकर लगाया हुआ है।

छह चौकीयाँ और सभामंडप के गुंबद तथा स्थंभों पर आबू पर स्थित देलवाड़ा के मंदिरों जैसी सुंदर नक्काशी उत्कीर्ण की गई हैं। उनमें भी छः स्तंभों में विशेष नक्काशी की गई है।

छह चौकीयों और सभामंडप की दोनों ओर की छतों के १२ खंडो में भी आबु-देलवाडा के मंदिरों जैसे ही विभिन्न प्रकार के सुंदर भावचित्र उत्कीर्ण किए गए हैं। छत में जो भावचित्र उत्कीर्णित हैं उनमें विशेषत: पंचकल्याणक के साथ तीर्थंकरों के विशिष्ट जीवन प्रसंग, कल्पसूत्र में वर्णित घटनाएँ, स्थूलभद्र का प्रसंग आदि भावचित्र उत्कीर्ण हैं। उन्हें समझाने के लिए प्रत्येक के नीचे लेख लिखे हैं।

प्रत्येक देहरी और आलों में प्रस्तरासन और परिकर है। उनमं से कुछ देहरियों के अलग हुए भाग जहाँ-तहाँ रखे हुए हैं। इस मंदिर की देहरियों की प्रतिमाओं पर संवत्-१०८७, संवत्-१११० तथा उन देहरियों पर और उनके अंदर के प्रस्तारसनों की गादियों पर संवत्-११३८ के लेख हैं। यह मूल मंदिर तो संवत्-१०८७ या इससे पूर्व का निर्मित हो ऐसा ज्ञात होता है।

यहाँ के मंदिरों में से मिले हुए लेखों में इस जिनालय के लेख सबसे प्राचीन लगते हैं। उनमें संवत्-१०८७ का लेख सबसे प्राचीन हैं।

मंदिर में बांये हाथ की ओर कोने में चतुर्द्वार की देहरी में समवसरण के आकार वाले सुंदर नक्काशीदार प्रस्तरासन के नीचे दो खंडो में चारों दिशाओं में तीन-तीन जिनप्रतिमाएँ उत्कीर्णित की गई हैं। उसके ऊपर एक ही पत्थर में तीन गढयुक्त चतुर्मुख (चार प्रतिमावाला) समवसरण रखा हुआ है। उस पर लेख लिखा हुआ है।

इस मंदिर की निर्माणशैली यहाँ के श्री महावीरस्वामी भगवान के जिनालय जैसी ही है। अंतर मात्र इतना है कि, ऊपर की कमान के दोनों और

भगवान महावीरस्वामी के मंदिर की तरह तीन नहीं अपितु चार आले हैं। इन प्रत्येक आलों में संवत् -११३८ के लेख हैं और एक लेख संवत्-११४६ का है। इसके अलावा मंडप के आठ स्थंभ, जो अष्टकोणाकृति में हैं वे झुम्मर को आधार देते हैं। उसके ऊपर चार तोरण हैं। ये सभी तोरण टूट गये हैं। मात्र पश्चिम की ओर का अवशेष बचा हुआ है।

पीछे के खाली भाग में एक देहरी हैं, उसमें नंदीश्वर की संरचना की हुई है। कुछ छोटी-छोटी मूर्तियाँ भी हैं परंतु अधिकांशतः खंडित हो गई हैं। बाहर के चबूतरे पर आले की दीवार पर लगाई गई मूर्ति सूर्य यक्ष की है। उसे कुछ लोग 'गणपति की मूर्ति' भी कहते हैं। उसके दोनों ओर दीवार में कुछ अन्य मूर्तियाँ भी लगाई गई हैं। उसमें एक मूर्ति चामरधारी की है।

इस शांतिनाथ भगवान के मंदिर में वस्तुतः सर्व प्रथम मूलनायक श्री ऋषभदेव की मूर्ति प्रतिष्ठित होगी। मुनि श्री जयंतविजयजी की पुस्तक कुंभारिया के परिशिष्ट में दिए हुए संवत्-११४८ के लेखांक : २८ (१४/६) में इस मंदिर का **श्री मदादिजिनालये** ऐसा उल्लेख किया गया है। इसके अतिरिक्त संवत् विहीन लेखांक, ३० (१५०) में **ऋषभालये** ऐसा उल्लेख मिलता है अर्थात् संवत्-११४८ के बाद किसी समय यहाँ मूलनायक की प्रतिमा में कोई बदलाव हुआ होगा।

: श्री संभवनाथ भगवान का मंदिर :

श्री नेमिनाथ भगवान के जिनालय के दक्षिण में लगभग दो सौ वर्ग की दूरी पर श्री संभवनाथ भगवान का मंदिर स्थित है। सभी मंदिरों की अपेक्षा इस मंदिर की संरचना भिन्न हो और प्रमाण में छोटी भी है। यह मंदिर मूलगर्भगृह, गूढमंडप, सभामंडप, शृंगारचौकी, कोट तथा शिखरयुक्त है। मंदिर में प्रदक्षिणा मार्ग-परिक्रमा नहीं है। पत्थर का बना है। प्रत्येक दरवाजे पर प्रायः नक्काशी की गई है और शिखर पर भी नक्काशी की गई है। मूलगर्भगृह में मूलनायक श्री संभवनाथ भगवान की मूर्ति बिराजमान है। उसे एक प्राचीन वेदी पर स्थापित किया गया है। कुछ लोग इस मूर्ति पर सिंह का लांछन होने के कारण इस मूलनायक श्री महावीरस्वामी की मूर्ति भी मानते हैं परंतु इस समय यह मंदिर श्री संभवनाथ का मंदिर कहा जाता है। प्राचीन ग्रंथों और 'तीर्थमालाओं' में संभवनाथ के मंदिर का उल्लेख नही है। वस्तुतः प्राचीनकाल की चित्रशैली में सिह की

आकृति घोड़े जैसी ही होती है अर्थात् यह मंदिर 'श्री महावीरस्वामी का मंदिर' होगा एसा लगता है।

गूढमंडप के एक गोखर में परिकर के साथ पंचतीर्थी की एक प्रतिमा स्थापित की गई है। गूढमंडप के प्रत्येक गोखर में मूर्ति रहित खाली परिकर हैं, तथा एक श्रावक-श्राविका की युगल है।

आरासण के इन चार मंदिरों का शिल्प-स्थापत्य, स्थंभ, कमान, छतों में आलेखित भावचित्र और संरचना आबू पर स्थित देलवाडा के विमलवसही मंदिर जैसी है अर्थात् संवत्-१०८७ में विमलवसही की प्रतिष्ठा हुई उससे एक वर्ष पूर्व यहाँ के शांतिनाथ भगवान के मंदिर से मिले पहली देहरी के संवत्-१०८७ के लेख के आधार पर कहा जा सकता है इस समय से पूर्व ही आरासण में मंदिर निर्माण कार्य प्रारंभ हो गया था।

: उपलब्ध ऐतिहासिक उल्लेख :

ये मंदिर किसने बनवाये, इस विषय में कोई निश्चित कथन नहीं मिलता, तथापि श्री शीलविजयजी अपनी तीर्थमाला में लिखते हैं कि -

'आरासणि छिं विमलविहार, अंबादेवी भुवन उदार'। (देखिए, प्राचीन तीर्थमाला भाग-१, पृष्ठ-१०३, कडी-३१)

श्री सौभाग्यविजयजीने भी संवत-१७५० में रचित "तीर्थमाला" में लिखा है : "आरासण आबुगढे जे नर चढें रे विमलवसी विसतार"

और फिर खीमाकृत "चैत्य-परिपाटी" गाथा-१७ में बताया गया है कि -

"आरासणि अरबद शिरे, वंदु विमलविहार"

("जैनयुग" पुस्तक-०४, अंक : ६-८, पृष्ठ : २५२)

"विजयप्रशस्ति महाकाव्य" सर्ग-२१, श्लोक की ६० वीं टीका में भी इसी बात का समर्थन मिलता है। ये सभी उल्लेख इन सभी मंदिरो को मंत्री विमलशाह द्वारा निर्मित किया हुआ बताते हैं।

यहाँ ११ वीं शताब्दी के द्वितीय चरण में नन्नाचार्य-गच्छ के आचार्य सर्वदेवसूरि ने, १२ वीं शताब्दी के द्वितीय चरण में वादीन्द्र देवसूरि ने, बृहद्, चंद्र और महाहड आदि गच्छों के सूरि मुनियों ने भी प्रतिष्ठादि की है। यहाँ

संवत्-११४८ (ई.स. १०९२) में थारापद्र गच्छीय यशोदेवसूरि ने आरासणगच्छ भी स्थापित किया था।

मांडवगढ के मंत्री पेथडशाह के पुत्र झांझण संवत्-१३४० (ई.स. १२६४) में यहाँ संघ लेकर यात्रार्थ आए थे। उसके बाद एकाध दो दशकों में खरतरगच्छीय आचार्य जिनचंद्रसूरि (तृतीय) और उसके बाद युगप्रधान आचार्य जिनकुशलसूरि संघ के साथ संवत्-१३७९ (ई.स. १३२३) में वंदनार्थ आए। इसके अलावा १५ वीं शताब्दी की, तथा १७ वीं शताब्दी की, कुछ चैत्यपरिपाटियों में इस तीर्थ के विद्यमान मंदिरों का नाम सहित उल्लेख मिलता है।

आरासण में सोलंकियों के शासन के पश्चात् राजा भीमसेन द्वितीय के मिलने वाले संवत-१२६३ (ई.स. १२०७) के लेख के बाद से या उसी समय में आबू की इतिहास-प्रसिद्ध परमार राजा धारावर्षदेव का शासन रहा होगा ऐसा अभिलेखों पर से जानने को मिलता है।

१३ वीं शताब्दी के अंत में हुए मुस्लिम आक्रमणों का आरासण भी शिकार हुआ। उसकी देवप्रतिमाएँ खंडित हुई, और नगर लगभग नष्ट हो गया। १४ वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में त्रिसंगमक (त्रिशृंगमक) के राणा महिपालदेव के आरासण पर के शासन के पश्चात् गाँव तथा देवमंदिर क्रमशः वीरान हो गए, तथापि १५ वीं शताब्दी में कुछ जैन यात्री आरासण आते रहे होंगे, वैसा विवरण है।

: जीर्णोद्धार :

श्री विजयसेनसूरि के उपदेश से तारंगा, शंखेश्वर, सिद्धाचल, पंचासर, राणपुर, आरासण और वीजापुर इत्यादि के मंदिरों का उद्धार संवत् १३६९ से १६७६ तक हुआ।

इस तीर्थ के कार्यभार का संचालन मुंबई वासी शेठ रायचंद के आधीन आया। उसके बाद अहमदाबाद के नगरशेठ ने भी ईस तीर्थ के कार्यभार के संचालन का उत्तरदायित्व संभाला। और अंत में दांता का श्री संघ यहाँ के कार्यभार का संचालन करने लगा।

संवत्-१९५७ (ई.स. १९०१) में यहाँ यात्रियों के लिए धर्मशाला बनी थी। पश्चात् संवत्-१९७६ (ई.स. १९२०) के वर्ष में आचार्य श्री विजयनेमिसूरिजी यहाँ पधारे। इन भव्य जिनमंदिरो की दुर्दशा देखकर उनको बहुत दुःख हुआ।

आचार्यश्री ने उनका जीर्णोद्धार करवाने का निर्णय किया । उन्होने अहमदाबाद की शेठ आणंदजी कल्याणजी पेढी के सदस्यों को कुंभारियाजी में बुलाया । सभी एकत्रित हुए और संवत्-१९७६ (ई.स. १९२०)में दांता श्री संघ ने कुंभारिया की व्यवस्था के संचालन का कार्य शेठ आणंदजी कल्याणजी पेढी को सौंप दिया ।

ई.स. १९२१ के आसपास जीर्णोद्धार का कार्य प्रारंभ हुआ । गर्भगृह और सभामंडपों को साफ करवाया । आरासण की खान से संगमरमर पत्थर निकलवाया गया । कुशल कारीगरों द्वारा पुराने और टूटे हुए भागों को सुधरवाना शुरु किया । पुराने स्तंभ, पाट आदि को कोई क्षति ना पहुँचे इस प्रकार से नवीन कार्य होने लगा । यह काम निरंतर तीन वर्षों तक चलता रहा । संवत्-१९९० (ई.स. १९३४) में पुराने ध्वज-दंडों के स्थान पर नये ध्वज-दंड चढाये । इस प्रकार पेढी ने कार्यभार-संचालन संभाला तब से इस तीर्थ के जीर्णोद्धार में लाखों रुपये खर्च किए और संचालनतंत्र को भी व्यवस्थित किया ।

वर्तमान में इस तीर्थ के पूरे परिसर का नये सिरे से विकास कार्य चल रहा है । (स्व. प्रो. मधुसूदनभाई ढाकी द्वारा लिखित पुस्तक में से)

शत्रुंजय तीर्थ स्पर्श का फल :

१. नंदीश्वर द्वीप की यात्रा करने से जो पुण्य होता है, उससे दुगुना पुण्य कुंडलगिरि की यात्रा करने से होता है ।
२. उससे तीन गुणा पुण्य रुचकगिरि की यात्रा करने से होता है ।
३. उससे चार गुणा पुण्य गजदंतगिरि की यात्रा करने से होता है ।
४. उससे दो गुणा पुण्य जंबूवृक्ष पर स्थित मंदिर से होता है ।
५. उससे छह गुणा फल धातकी वृक्ष स्थित चैत्य से होता है ।
६. उससे चौगुणा पुण्य पुष्करवर द्वीप के चैत्य से मिलता है ।
७. उससे सौ गुणा पुण्य मेरुपर्वत की चूलिका के चैत्य से होता है ।
८. उससे हजार गुणा पुण्य सम्मेत-शिखर तीर्थ यात्रा से होता है ।
९. उससे दस हजार गुणा पुण्य अंजनगिरि की यात्रा से होता है ।
१०. उससे लाख गुणा पुण्य रैवतगिरि की यात्रा से होता है ।
११. उससे करोड़ गुणा पुण्य शत्रुंजय तीर्थ के स्पर्श करने से होता है ।

जैन श्वेताम्बर सोसाइटी
JAIN SWETAMBER SOCIETY

C/O. K. S. RAMPURIA
"RAMPURIA MANSION"
17/3, MUKHRAM KANORIA ROAD
HOWRAH - 711 101
DIAL : 2666-7212

DATE.................................

आवश्यक सूचना

भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थ क्षेत्र कमेटी के मुख्यपत्र तीर्थ वन्दना के अंक देखकर आश्चर्य हुआ। इनमें श्री सम्मेत शिखरजी स्थित टूकों के बारे में भ्रमित करनेवाले समाचार दिये गये हैं। हम स्पष्ट करना चाहते हैं कि पारसनाथ पर्वत स्थित सभी टूकों की व्यवस्था, मरम्मत इत्यादि जैन श्वेताम्बर सोसायटी द्वारा होती है। श्री मुनिसुव्रत स्वामीजी की टूक की मरम्मत की अभी कोई आवश्यकता नहीं है। किसी भी टूक की मरम्मत अथवा साफ-सफाई जैन श्वेताम्बर सोसाइटी द्वारा ही की जाती है। इन कार्यों के खर्च हेतु कभी भी अपील नहीं की जाती है बल्कि श्रद्धालु लोग स्वतः अपनी इच्छानुसार दानपेटी में अथवा रसीद कटवा कर दान देते हैं।

કમલસિંહ રામપુરિયા:
[कमल सिंह रामपुरिया]
अध्यक्ष

29-06-2016

TIRTHS :
P.O. SIKHARJI
DIST : GIRIDIH
JHARKHAND, PIN: 825329
PHONE : (06558) 232226
232360,232260

TIRTHS :
P.O. CHAMPAPURI
DIST : BHAGALPUR
BIHAR, PIN : 812004
PHONE : (0641) 2500205

TIRTHS :
P.O. LACHHUAR
VIA : SIKANDRA
DIST . JAMUI
BIHAR, PIN : 811315
PHONE : (06345) 222361

भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी के द्वारा प्रकाशित "**तीर्थवंदना**" के पिछले कुछ अंकों में सम्मेतशिखरजी महातीर्थ की टूको के जीर्णोद्धार के संबंध में बेबुनियाद एवं झूठी खबरें छप रही है।

इस बारे में सम्मेतशिखरजी महातीर्थ का प्रबंधन करनेवाले ट्रस्ट जैन श्वेताम्बर सोसाइटी, कोलकाता की ओर से जो स्पष्टीकरण प्रात हुआ है, वह हम यथावत छाप रहे है। इससे पता लगता है कि जोर शोर से कितना भ्रामक प्रचार हो रहा है। आप सभी से निवेदन है इस प्रकार के भ्रामक प्रचार को ध्यान में न ले।

वास्तविकता जानने के लिए जैन श्वेताम्बर सोसाइटी, कोलकाता का सीधा संपर्क भी कर सकते है।

तीर्थ व्यवस्था, सलाह सूचन, दान-सहयोग, जीवदया, पांजरापोल, जीर्णोद्धार वगैरह प्रवृत्तियों के लिए पेढी के संपर्क सूत्र

शेठ आणंदजी कल्याणजी ट्रस्ट
श्रेष्ठि लालभाई दलपतभाई भवन,
२५, वसंतकुंज, नवा शारदा मंदिर रोड, पालडी, अहमदाबाद-३८० ०२७
फोन : (०७९) २६६४४५०२, २६६४५४३०
समय : सुबह ११ से १-३० एवं दोपहर २ से ३-३०
Telefax : 079-266082441 • Email : shree_sangh@yahoo.com

शेठ आणंदजी कल्याणजी ट्रस्ट
पटनी की खड़की, झवेरीवाड, अहमदाबाद-३८० ००१
समय : सुबह ११ से १-३० व दोपहर २ से ३-३० तक
फोन : (०७९) २५३५६३१९

मुंबई ओफिस
शेठ आणंदजी कल्याणजी
१००१, १०वे माल, मेजीस्टीक सोपिंग सेन्टर, ११४, जे.असे.असे. रोड
गिरगाम चर्च के पास गिरगाव, मुंबई-४००००४.
(पैसा जमा करवाने का समय) सुबह ११.०० से १.३० दुपहर मे २.०० से ६.००

शेठ आणंदजी कल्याणजी C/o. श्री कयवनभाई हेमेन्द्रभाई संघवी
विश्रुत जेम्स, ७०१-२ ए अमन चेम्बर्स ७वा माला,
ओपेरा हाउस, मुंबई-४०० ००४ फोन : (०२२) ३२९६१८७०
समय : दोपहर १२ से ५

शेठ आणंदजी कल्याणजी ट्रस्ट
श्री रजनीशांति मार्ग, पालीताणा-३६४ २७०
फोन : ०२८४८-२५२१४८, २५३६५६
समय : सुबह ९ से १२.३० दोपहर २.३० से ७

और अंत में

आपको 'श्री आनंदकल्याण' का यह अंक अच्छा लगा ? क्या अच्छा लगा ? कुछ पसंद न भी आया हो तो वह भी हमें खुले मन से पर खुरदरी नहीं अपितु नरम कलम से लिख भेजें । हमें अवश्य अच्छा लगेगा। पत्रव्यवहार के लिए ई-मेईल माध्यम इच्छनीय एवं उपयुक्त रहेगा ।

anandkalyanmagazine@gmail.com

सुवर्ण महोत्स सर्व साधारण फंड का उपयोग एंव उद्देश्य

- ५०० वीं सालगिरह के प्रसंग में छोटी योजना के द्वारा हर एक श्रावक-श्राविका को सहभागी बनने का अमूल्य अवसर।
- ५०० वीं सालगिरह का अद्‌भूत एंव अद्वितीय प्रसंग आयोजन।
- इस फंड की राशि "सुवर्ण महोत्सव अवसर पर आयोजित सर्व साधारण फंड" खाते में जमा होगी।
- इस कोर्पस फंड के व्याज का उपयोग सर्व साधारण खाते में जैसे कि सात क्षेत्र, जीवदाय और अनुकम्पा इत्यादि में आवश्यकता अनुसार किया जायेगा।
- राशि हर साल रू. ३६० या एक साथ रू.५४०० दोनों विकल्प में जमा की जा सकती है।
- Anandji Kalyanji Pedhi मोबाईल एप्लीकेशन के द्वारा ओनलाईन भी राशि जमा की जा सकती है।

विशेष जानकारी हेतु संपर्क करे :
शेठ आणंदजी कल्याणजी, २५, वसंतकुंज, नवा शारदा मंदिर रोड,
पालडी, अमदावाद ३८०००७. फोन +91 - 79 26610367
हेल्प लाईन नंबर : + 91-93 75 500 500, + 91-93 76 500 500

Contact : info@anandjikalyanjipedhi.org
Visit : anandjikalyanjipedhi.org
Download : Social Presence
Download : Anandji Kalyanji Pedhi App

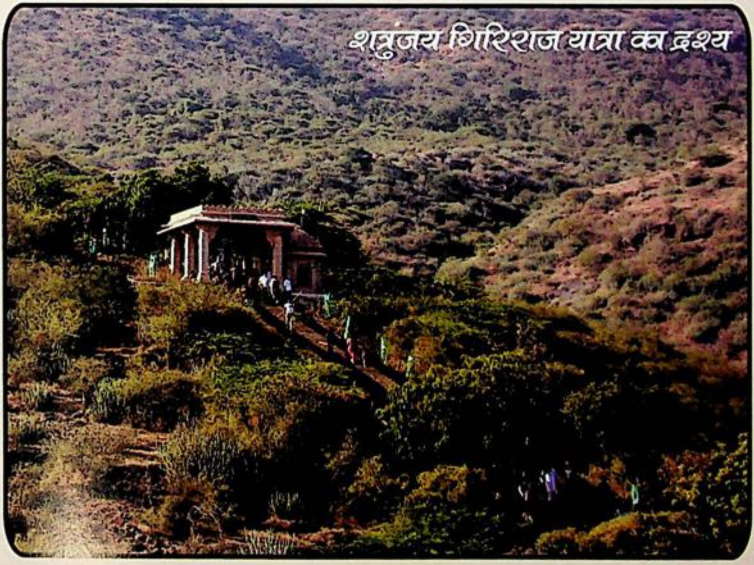

अंक-7

श्री शत्रुंजय तीर्थाधिपति

श्री आदिनाथ दादा की ५००वीं सालगिरह

MISSION 500
SUVARNA MAHOTSAV CELEBRATION

संवत २०८७ वैशाख वद-६.
सोमवार दिनांक १२-०५-२०३१

BOOK - POST

To,

श्री आनंद कल्याण (त्रिमासिक पत्र)

श्रेष्ठी लालभाई दलपतभाई भवन, २५, वसंतकुंज,
नवा शारदा मंदिर रोड, पालडी, अहमदाबाद - ३८० ००७.

E-mail : anandkalyanmagazine@gmail.com